RESEARCH FRONT

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

समावेशी भारत की अम्बेडकरवादी परिकल्पना : सामाजिक लोकतंत्र के लिये वैकल्पिक दृष्टिकोण

डॉ0 अजय कुमार
समाजशास्त्र विभाग
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
(समाज विज्ञान)
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
विद्या विहार, रायबरेली रोड, लखनऊ, (उ0प्र0). 226025

शोध सार/परिचय

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर (बाबा साहेब अम्बेडकर) (1891–1956) आधुनिक भारतीय राजनीति–विचारक थे जिन्हें 'दलितों के मसीहा' और 'भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माता' के रूप में याद किया जाता है। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में, वे ''हिंदू समाज के अत्याचारपूर्ण तत्वों के प्रति विद्रोह के प्रतीक'' थे। उन्होंने हिंदुओं में 'अछूत' या 'अस्पृश्य' मानी जाने वाली जातियों को संगठित किया, शासन के अंगों में उनके प्रतिनिधित्व के लिए संघर्ष किया, और उनकी शिक्षा को बढ़ावा दिया। स्वयं 'अछूत' जाति में जन्म लेकर उन्होंने अनवरत संघर्ष और आत्मविश्वास के बल पर उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। अंत्यज्य, अस्तृश्य जातियों की पहचान को लेकर चलने वाला संघर्ष आज का संघर्ष नहीं है बल्कि इतिहास में इसके संघर्ष के तमाम चिन्ह मिलते हैं। अर्थात् दलित पहचान को लेकर चलने वाला संघर्ष आज का ना होकर ऐतिहासकि विरासत का परिणाम है। 18वीं शताब्दी से ही दलित, अस्पृश्य लोगों को उनके अधिकारों को दिलाने तथा दयनीय परिस्थिति से निजात दिलाने के लिए बहुत से संघर्ष चलते रहे थे। इन संघर्षों में दलित समाज में जन्मे समाज सुधारकों के साथ–साथ अगड़ी कही जाने वाली जाति के तमाम लोगों ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। बाबा साहेब अम्बेडकर आधुनिक भारत के प्रमुख चिंतकों में से एक हैं। उनका चिंतन मुख्य रूप से स्वतंत्रता, मानव समानता, लोकतंत्र और सामाजिक–राजनीतिक मुक्ति (स्वाधीनता) के मुद्दों से जुड़ा है। वह विश्व के अदभुत् चिंतक हैं जिन्होंने बचपन से ही अत्यंत अपमान, गरीबी और सामाजिक कलंक सहा परन्तु फिर भी महान शैक्षिक और दर्शनिक ऊंचाइयों को छुआ। वह एक क्रांतिकारी समाज सुधारक थे जिन्होंने लोकतंत्र में अत्यंत विश्वास और समाज का नैतिक आधार प्रदर्शित किया। वे मोहनदास करमचन्द गांधी द्वारा संचालित भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख आलोचकों में से एक थे। उन्होंने भारत में नागरिक और राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण किया और उन विचारधाराओं और संस्थाओं की आलोचना की जिन्होंने लोगों को नीचा दिखाया और दास बनाया। उन्होंने कठोरता और प्रतिक्रिया के साथ अर्थव्यवस्था, सामाजिक संरचनाओं और संस्थाओं, विधि और संविधानवाद इतिहास तथा धर्म पर अनेक प्रमुख अध्ययन किए। वे भारतीय संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे और विवेकपूर्वक स्पष्टता के साथ इसके प्रमुख प्रावधानों को समर्थन किया तथा इसके द्वारा समर्थन किए गए आदर्शों की उपेक्षा किए बिना तर्कों पर अडिग रहे। उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया था और आधुनिक और सामाजिक रूप से उद्धारपूर्ण आग्रहों का प्रत्युत्र देने के लिए अपने हजारों अनुयायियों के साथ इसे नया रूप दिया और आधुनिक भारत में इसके पुनर्जीवन के लिए मार्ग प्रशस्त किया। प्रस्तुत शोध आलेख में अम्बेडकर के समावेशी भारत की परिकल्पना के वैकल्पिक दृष्टिकोण के प्रश्नों को समाजशास्त्रीय एवं सैद्धांतिक रूप में विश्लेषित किया गया है। प्रस्तुत शोध आलेख द्वितीयक स्रोतो पर आधारित है। जिसमें विभिन्न महत्वपूर्ण एवं स्तरीय साहित्यों, जर्नल, शोध प्रपत्रों, का प्रयोग कर उनमें उपलब्ध कथनों तथ्यों के आधार पर एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है तथा इसके साथ ही वर्णनात्मक शोध प्रारूप को आधार बनाया गया है। जिसका प्रमुख लक्ष्य घटनाओं और स्थितियों का वर्णन करना होता है। जिसके आधार पर प्रस्तुत इस शोध आलेख में यह प्रयास किया गया है कि सामाजिक लोकतंत्र के लिये समावेशी भारत की अम्बेडकरवादी परिकल्पना क्या है, से संबंधित विभिन्न आयामों को उन पर लिखित पुस्तकों और लेखों के माध्यम से सामने लाया जा सके। जिसके आधार पर प्रस्तुत शोध आलेख में अम्बेडकर की वैकल्पिक राजनीति से सम्बन्धित घटनाओं, स्थितियों, कारणों एवं परिणामों का समाजशास्त्रीय ढंग से विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

कुंजी शब्दः भारतीय समाज, दलित, सामाजिक लोकतंत्र, समावेशी भारत, दलित आंदोलन, दलित राजनीति।

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर : जीवन परिचय

बाबा साहेब अम्बेडकर (1891–1956) का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महाराष्ट्र में अछूत महार जाति में हुआ था। उन्होंने बाल्यावस्था और उसके बाद के अपने जीवन में छुआछूत कारण सभी प्रकार का सामाजिक अपमान सहा। कक्षा में उन्हें शेष विद्यार्थियों के साथ बैठने नहीं दिया जाता था। विद्यालय में उन्हें अपने हाथों से पानी पीना पड़ता था और ऊंची जाति के सदस्य ऊपर से पानी डालते थे। संस्कृत सीखना उनके लिए मना था। इन सभी बाधाओं के बावजूद उन्होंने मुंबई विश्वविद्यालय से अपनी स्नातक की शिक्षा पूरी की और संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलंबिया विश्वविद्यालय से अपनी स्नातकोत्तर और पीएच0डी0 पूरी करने चले गए। वे अमेरिका और यूरोप में उदार और उग्र विचारधाराओं, विशेषकर फ्रांसिसी क्रान्ति के बाद उभरी विचारधारा से प्रभावित हुए। अमेरिका में जातीय भेदभाव के विरूद्ध संघर्षों ने भारत में जाति–आधारित उत्पीड़न से लड़ने के उनके संकल्प में सहायता की। ये भारत में विद्यमान अस्पृश्ता (छुआछूत) और जाति व्यवस्था से बहुत गहरे जुड़ गए। साथ ही साथ, उन्होंने भारत की अर्थव्यवस्था, राजनीति और सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले उपनिवेशवाद के प्रभाव की जांच पड़ताल की। ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रशासन और वित्त *(Administration and Finance of East India Company)* के उनके एम0ए0 के शोधनिबंध और कोलंबिया विश्वविद्यालय में ब्रिटिश भारत में प्रान्तीय वित्त का विकास *(The Evolution of the Provincial Finance in British India)* और रूपए की समस्या–इसका उद्गम और इसका समाधान *(The Problem of the Rupee-Its Origin and its Solution)* पर डी0एससी0 शोध निबंध औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था और राजनीति तथा उपनिवेश–विरोध आर्थिक चिंतन के प्रति उनका उत्कृष्ट योगदान था।

कोलंबिया विश्वविद्यालय में अपनी पीएच0डी0 उपाधि पूरी करने के बाद, वे बड़ौदा महाराजा के प्रशासन की सेवा करने के लिए वापस आ गए जिन्होंने उन्हें अमेरिका में शिक्षा के लिए भेजा था। परन्तु विशिष्ट योग्यताओं के बाद भी, उन्हें बड़ौदा प्रशासन में अस्पृश्यता का दर्द झेलना पड़ा। उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और कुछ समय के लिए वे विडेनहम कालेज ऑफ कामर्स एण्ड इकानामिक्स, मुंबई में राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर हो गए। उन्होंने 1919 में मांटेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधारों से पहले साउथबोरो समिति के समक्ष अभिवेदन किया और दलित वर्गों जिन्हें उस समय अस्पृश्य और निम्न जातियां समझा जाता था, के लिए अलग प्रतिनिधित्व का समर्थन किया। उन्होंने जनवरी, 1920 में मराठी में एक पाक्षिक मूकनायक आरंभ किया और कोल्हापुर के शाहू महाराज की अध्यक्षता में उस वर्ष हुए प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन में अग्रणी भूमिका निभाई। अपनी डी0एससी0 की उपाधि पूरी करने के लिए उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स में प्रवेश लिया जिसे उन्होंने 1922 में पूरा कर लिया और उन्हें उसी वर्ष 1923 में मुंबई में अपनी कानूनी प्रैक्टिस आरंभ की और अछूतों को एकत्र करने और उन्हें संगठित करने में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने 1924 में बहिष्कृत हितकारिणी सभा बनाई। 1927 में वे मुंबई विधानपरिषद् में मनोनीत हो गए। उन्होंने महाड़ में चोवदार तालाब में प्रसिद्ध सत्याग्रह का नेतृत्व किया और पानी के उस साझा तालाब से अछूतों के लिए अधिकारों की मांग की जिससे उन्हें रोका जाता था। परिणामस्वरूप मनुस्मृति को भी जलाया गया। उन्होंने मराठी में पाक्षिक पत्रिका बहिष्कृत भारत आंरभ किया और 1927 में दो संगठनों 'समाज समता संघ' और 'समता सैनिक' की स्थापना की जिसके माध्यम से दलित वर्ग के लिए समानता की मांग दोहराई। 1928 में दलित वर्ग शिक्षा समिति, मुम्बई की स्थापना की। उसी वर्ष पाक्षिक पत्रिका समता को भ्झी प्रकाशित किया गया। इन वर्षों में डॉ0 अम्बेडकर कानून के प्रोफेसर के तौर पर सक्रिय रहे। वे साइमन कमीशन के समक्ष अपना प्रतिनिधिमंडल लेकर गए तथा भारत में संवैधानिक सुधारों के मुद्दे की जांच की मांग की। उन्होंने 1930 में कालाराम मंदिर, नासिक में सत्याग्रह का नेतृत्व किया और अछूतों के लिए मंदिर में प्रवेश की मांग की। उन्होंने 1930 में नागपुर में आयोजित प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस की अध्यक्षता की।

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

डॉ0 अम्बेडकर के स्वंसहायता और अछूतोद्धार के कार्य, आधुनिक भारत के आधुनिक दृष्टिकोण, लोकतंत्र और प्रतिनिधित्व पर उनके विचारों ने उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मोहनदास करमचंद गांधी के विरूद्ध निर्विवाद नेता के रूप में मुकाबले पर ला खड़ा किया। यह विरोध 1931 में गोल मेज सम्मेलन में उग्र रूप से दिखाई दिया जिसमें डॉ0 अम्बेडकर ने दलित वर्गों के लिए पृथक् निर्वाचन मंडल की मांग की जिसका महात्मा गांधी ने कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में तीव्र विरोध किया। महात्मा गांधी ने 1932 के सांप्रदायिक पंचाट के विरूद्ध आमरण अनशन किया क्योंकि इस पंचाट ने अछूतों को पृथक् निर्वाचन मंडल प्रदान किया था। डॉ0 अम्बेडकर ने दलित वर्गों की ओर से बातचीत की और पुणे समझौते पर हस्ताक्षर किए जिसमें दलित वर्गों के आरक्षण सहित संयुक्त निर्वाचन मंडल के लिए सहमति व्यक्त की गई थी। इसके बाद महात्मा गांधी ने अनशन वापस ले लिया।

1936 में डॉ0 अम्बेडकर ने स्वतंत्र लेबर पार्टी की स्थापना की जिसने मुंबई प्रान्त में 1937 के चुनावों में 17 सीटों पर मुकाबला किया और उनमें से 15 सीटें जीतीं। द्वितीय विश्व युद्ध और मुस्लिम लीग द्वारा पाकिस्तान की मांग ने राष्ट्रीय आन्दोलन में नए और जटिल मुद्दों को प्रस्तुत किया। डॉ0 अम्बेडकर ने 1942 में एक अलग पार्टी अनुसूचित जाति परिसंघ स्थापित कर ली और वे उसी वर्ष पांच वर्ष की अवधि के लिए वायसराय काउंसिल के सदस्य नियुक्त हो गए।

अम्बेडकर को बंगाल से संविधान सभा के लिए चुन लिया गया और उन्होंने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ संयुक्त भारत के लिए आग्रह किया। उन्हें भारतीय संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया तथा वे अगस्त 1947 में नेहरू मंत्रिमंडल में विधि मंत्री हो गए। इन दोनों क्षमताओं में उन्होंने भारत में सार्वजनिक जीवन के लिए एक स्वतंत्र और समतावादी ढांचे के विषय में विचार किया, उसका निर्माण किया और उसकी रक्षा की तथा भारत में सुविधावंचित लोगों के लिए व्यापक सुरक्षा उपायों तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों और भाषायी एवं सांस्कृतिक समूहों के लिए स्वायत्तता चाही।

अम्बेडकर ने 1951 में नेहरू मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया और भारत में सामाजिक तथा आर्थिक लोकतंत्र की कमी और उसके अभाव में कारगर ढंग से कार्य करने के लिए संवैधानिक लोकतंत्र की अक्षमता के विकल्प तैयार करने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप, इस खोज के कारण उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया और भारतीय रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना का प्रस्ताव किया। 6 दिसम्बर, 1956 को उनका देहांत हो गया और वे करोड़ों लोगों को बिलखता छोड़कर चले गए। वह अपने पीछे जटिल वैचारिक ढांचा छोड़ गए जो उनकी अनेक रचनाओं और भाषणों में मौजूद है तथा उनके सार्वजनिक जीवन में उनके नागरिक और राजनीतिक जीवन का सूचक रहा है तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण के लिए बौद्धिक कार्य सूची में स्पष्ट दिखाई देता है।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : चिंतन और विचार

डॉ0 अम्बेडकर के चिंतन में अनेक आयाम हैं। ऐसे बहुत ही कम मुद्दें हैं जो उनसे अछूते रह गए हों। उन्होंने कई महत्वपूर्ण विषयों पर अपना मत प्रस्तुत किया जो उनके समय के भारत सामना कर रहा था। उनकी बहुमुखी प्रतिभा उनके सामाजिक और राजनीतिक चिंतन, आर्थिक विचारों, कानून और संविधानवाद में परिलक्षित होती है। डॉ0 अम्बेडकर ने अनेक पुस्तकें लिखीं। अपने समकालीनों के विपरीत, उन्होंने अपनी पुस्तकें पर अनेक शोध किए। प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में भारतीय संविधान लिखने और संविधान सभा की लंबी चर्चाओं में इसका समर्थन करने के अतिरिक्त उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं जो व्यवस्थित चिंतन दर्शाती हैं। रूपए की समस्या *(The Problem of the Pupee)* (1923) और ब्रिटिश भारत में प्रान्तीय वित्त का अभ्युदाय *(The Evolution of Provincial Finance in British India),* (1925) पर अपने शोध प्रबंधों के अतिरिक्त, उन्होंने जाति उन्मूलन *(Annihilation of*

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

Caste) (1936), पाकिस्तान पर विचार *(Thought on Pakistan), (1940)* कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया है *(What Congress and Gandhi have done to the Untouchables), (1948)* अछूतः वे कौन थे और वे अछूत क्यों बने *(The Untouchables: Who were they and why they become Untouchables), (1948),* राज्य और अल्पसंख्यक *(States and Minorities), (1947),* भाषायी राज्यों पर विचार *(Thoughts on Linguistic States), (1955),* और उनकी महान कृति बुद्ध और उनका धम्म *(The Buddha and His Dhamma), (1957)* सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। इनके अलावा, उन्होंने अनेक लेख लिखे, विद्वतापूर्ण ज्ञापन प्रस्तुत किए, व्याख्यान दिए और अपने द्वारा प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं में विभिन्न मुद्दों पर टिप्पणियां प्रस्तुत कीं।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : वैचारिक दृष्टिकोण

डॉ0 अम्बेडकर ने स्थिति के अनुसार उदारवादियों, मार्क्सवादियों और अन्य लोगों से सीमांकन के संदर्भ के आधार पर अपने आपको 'प्रगतिशील अतिवादी' और कभी–कभी 'प्रगतिशली रूढ़िवादी' कहा हैं वे स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने स्वतंत्रता को सकारात्मक शक्ति ओर क्षमता के रूप में देखा तथा लोगों को आर्थिक प्रक्रियाओं और शोषण, सामाजिक संस्थाओं और धार्मिक रूढ़िवादिता तथा भय और पूर्वागहों द्वारा प्रतिबन्धित हुए बिना उन्हें अपनी पसन्द चुनने के योग्य बनाया। उनका मानना था कि उदारवाद स्वतंत्रता की संकुचित अवधारणा का समर्थन करता है जिसने कुछ ही लोगों के हाथों में बड़ी मात्रा मं संसाधन दे दिए हैं, और इस कारण वंचना और शोषण उत्पन्न किया हैं उनका मानना था कि उदरवाद सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं के बारे में असंवेदनशील है जो औपचारिक समानता को प्रोत्साहित करते हुए आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक असमानताओं को बढ़ाता है। उनका तर्क था कि उदर व्यवस्थाओं में अल्पसंख्यकों की गहन असमानताएं छिपी हुई हैं जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में कालों की दशाएं और यूरोप में यहूदियों की दशाएं। उन्होंने यह भी तक दिया कि उदरवाद प्रायः औपनिवेशिक शोषण और व्यापक अन्याय को उचित ठहराने के लिए है। व्यक्ति पर उदार प्रभाव ने समुदाय के बंधनों की उपेक्षा की और विचारशील और रचनात्मक छवि को बनाए रखने के लिए समुदाय की आवश्यकता की भी उपेक्षा की। इसके अतिरिक्त, उदरवाद ने शोषणकारी और प्रभावशाली संरचनाओं से उत्पन्न व्यक्ति के दमन और अलगाव की भी उपेक्षा की। उन्होंने पाया कि उदरवाद को राज्य और उन उपायों के बारे में बहुत कम समझ है जिन्हें राज्य को बेहतर जीवन देने और उसे प्रोत्साहित करने के लिए बहुत जरूरी अपनाया जाना चाहिए। उन्होंने महसूस किया कि विधि के समक्ष समानता का सिद्धान्त असमतावादी व्यवस्थाओं के मुकाबले वास्तव में एक बड़ा कदम है और इसने असमतावादी व्यवस्थाओं को उखाड़ फेंकने का प्रयास किया है परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। उन्होंने शक्तिशाली विचारों जैसे विचार की समानता, प्रतिष्ठा की समानता और गरिमा की समानता का भी समर्थन किया। वे प्रतिष्ठा की धारणा के प्रति संवेदनशील थे और उनकी दृष्टि में समुदाय की धारणा ही प्रमुख थी।

अम्बेडकर ने कुछ ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों का पता लगाया जिन पर वे मार्क्सवाद से सहमत थे। उनका तर्क था कि दर्शनशास्त्र का कार्य विश्व को बदलना है जैसा कि मार्क्स ने अपने शोध प्रबंधों फ्यूरबैक में कहा था और अम्बेडकर ने इसी प्रकार की मांग करके बुद्ध के मुख्य संदेश में देखा कि विभिन्न वर्गों के बीच संघर्ष होता है और वर्ग संघर्ष सामाजिक संबंधों को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। उनका तर्क था कि एक अच्छा समाज अपने पूर्ण विकास के उत्पादन के साधनों के विस्तृत सार्वजनिक स्वामित्व और प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान अवसर की मांग करता है ताकि व्यक्ति अपना पूर्ण विकास कर सके। परंतु उन्होंने इसके लिए समाजवाद के लिए काम कर रही मानव एजेंसी के हस्तक्षेप के बिना समाजवाद की अपरिहार्यता को अस्वीकार कर दिया और कहा कि राजनीतिक और वैचारिक संस्थाओं द्वारा निभाई जाने वाली महत्वपूर्ण भूमिका को इतिहास की आर्थिक व्याख्या और राज्य

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

को शिथिल करने वाली अवधारणा स्वीकार नहीं करती। अच्छा समाज बनाने के लिए दृढ़ जन कार्यवाही का आह्वान किया। उन्होंने संघर्ष आरंभ करने वाले लोगों और सामाजिक संबंधों में परिवर्तन लाने में संघर्षों के रूपांतरकारी प्रभाव को रेखांकित किया। उनका यह भी मानना था कि एक नैतिक क्षेत्र को स्वीकार करके ही एक वांछनीय राजनीतिक व्यवस्था सृजित की जा सकती है जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से बुद्ध की शिक्षाओं में देखा।

अम्बेडकर ब्राह्मणवादी विचारधारा के कड़े आलोचक थे जिसे वे समझते थे कि यह भारत में प्रभावशाली वैचारिक अभिव्यक्ति रही है। उनका तर्क था कि यह बुद्ध द्वारा शुरू की गई क्रान्ति को हराकर अपनी समस्त तीव्रता के साथ पराजित कर पुनः स्थापित हुई। इसने सामाजिक संस्थाओं और संबंधों की व्यवस्था करने में श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धांत का समर्थन किया, योग्यता के सिद्धान्त की अपेक्षा जन्म के सिद्धान्त को प्रोत्साहित किया, विवेक (बुद्धि) की उपेक्षा की और कर्मकांड तथा पुरोहित का समर्थन किया। इसने शूद्रों तथा अछूतों को निरंतर निम्न कार्यों (दासता) और अपयश की ओर धकेला है। इसने असमानता और संसाधनों और पदों के असमान वितरण का समर्थन किया तथा कर्म सिद्धान्त जैसे नियमों के प्रति अपील द्वारा ऐसे उपायों को धार्मिक स्वीकृति प्रदान की। इसने शारीरिक श्रम की अपेक्षा मानसिक श्रम की श्रेष्ठता के सिद्धान्त को माना। इसे निम्न श्रेणियों और अलग थलग किए गए वर्गों के प्रति बिल्कुल भी सहानुभूति नहीं है। इसने करोड़ों लोगों को निम्न दशा में सभ्यता से दूर छोड़ दिया था और उनकी निम्न दशाओं का समर्थन किया था। इस व्यवस्था में स्वतंत्रता और पसंद के लिए कोई स्थान नहीं था। इसने समाज को अनेक बंद समूहों में विभाजित कर दिया था जिससे वे श्रेणियां समाप्त करने में, समुदाय की भावना विकसित करने और साझे प्रयासों को प्रोत्साहित करने में असमर्थ थे। इसने संयुक्त जीवन से सुख और दुख छीन लिए, संघर्षों और प्रयासों को कमजोर कर दिया, सुखों और आमोद–प्रमोद को दुर्बल बना दिया ब्राह्मणवाद किसी भी प्रकार ने नैतिक मूल्यों और उन मूल्यों पर आधारित दृष्टिकोणों से वंचित था।

अम्बेडकर गांधी और गांधीवाद के कटु आलोचक थे। उन्होंने छुआछूत के उन्मूलन के प्रति गांधी के दृष्टिकोण पर प्रहार किया क्योंकि इस दृष्टिकोण ने शास्त्री में छुआछूत के प्रतिबंध को मना किया और सवर्ण हिन्दुओं को इसे स्वेच्छा से छोड़ने का आह्वान किया तथा इसके लिए सुधार करने के लिए कहा। अम्बेडकर ने अनुभव किया कि अधिकार और मानवता को उन लोगों की दया और पूर्वग्रह पर नहीं छोड़ा जा सकता जिन्होंने कम आकलन करने में निहित स्वार्थ विकसित किया है। उन्होंने गांधी की तरह जाति–व्यवस्था का सीमांकन नहीं किया, बल्कि श्रेणीबद्ध असमानता को एक ही सिद्धान्त के रूप में देखा। यदि गांधी के आग्रह से छुआछूत समाप्त हो जाती है, जिसे अम्बेडकर असंभव समझते थे, तो भी अछूत शूद्रों के स्तर के रूप में समाज के सबसे निचले पायदान पर ही रहेंगे। उन्होंने गांधी को न केवल हिन्दू रूढ़िवादिता के प्रति समर्पण करते देखा बल्कि नए सिरे से इस रूढ़िवादिता का पुनर्निर्माण करते भी देखा। गांधी अछूतों को नैतिक नीरसता प्रदान कर रहे थे और दया के साथ उनहें खरीदने का प्रयास कर रहे थे जबकि दूसरों को वे बिना किसी रूकावट के उनके हितों को प्रोत्साहित करने दे रहे थे। अम्बेडकर ने गांधी द्वारा अछूतों को दिया गया 'हरिजन' नाम अस्वीकार कर दिया और इससे घृणा की। अम्बेडकर ने गांधी द्वारा प्रचारित कई मुख्य धारणाओं जैसे स्वराज, अहिंसा, विकेन्द्रीकरण, ट्रस्टीशिप, खादी और शाकाहार को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने आधुनिक अर्थव्यवस्था के साथ आधुनिक राज्यव्यवस्था का समर्थन किया। उनके एजेंडे में महसूस किया कि पंचायतीराज के प्रति बेबाक दृष्टिकोण से प्रभावशाली वर्गों को अतिरिक्त संसाधन प्रदान करने से गांव में ये वर्ग और मजबूत हो जाएंगे और उन्हें उनसे नीचे के सामाजिक वर्गों और समूहों का शोषण करने की वैधता मिल जाएगी।

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : तार्किकता व स्वतंत्रता

अम्बेडकर ने आधुनिक युग को मानव विवेक के मिथकों, रीति–रिवाजों और अंधविश्वासों पर मानव विवेक की विजय की दृष्टि से देखा। उनका तर्क था कि विश्व और मानव को मानव के विवेक और प्रयास से स्पष्ट किया जा सकता है। अलौकिक शक्तियों को अपने उद्देश्य के लिए बुलाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। वास्तव में अलौकिक शक्तियां स्वयं कमजोर मानव क्षमताएं और मानव विकास की अल्पविकसित अवस्था को व्यक्त करती हैं। अतः उन्होंने कहा कि मानव विवेक की अभिव्यक्ति सकारात्मक रूप से विज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी में निहित है। यदि उनके बारे में समस्याएं हैं तो वही विवेक आवश्यक सुधार करने में सक्षम हैं इसके अतिरिक्त उन्होंने ज्ञान को मीमांसात्मक और गोपनीय मानने की बजाए अत्यंत व्यावहारिक समझा। उन्होंने महसूस किया कि व्यावहारिक रूप से सक्रिय भागीदारी से अलग हुआ मीमांसात्मक ज्ञान पुरोहिती और निराधार कल्पना को जन्म देता है।

धर्म के प्रति अम्बेडकर का दृष्टिकोण मिश्रित रहा। उन्होंने व्यक्तिगत ईश्वर में विश्वास का समर्थन नहीं किया। उनका मानना था कि धर्म नश्वरता की भांति समाजों को स्थायी आधार प्रदान करता है और श्रेष्ठ जीवन का सामूहिक कार्य करने के योग्य बनाता है। इस प्रकार का धर्म लक्ष्यों को ऊपर उठाता है, परोपकार और दूसरों के लिए सरोकार को बढ़ावा देता है तथा उन्हें एकता में बांधता है। यह लोगों का ध्यान रखने के साथ–साथ उन्हें प्रोत्साहित करता है तथा व्यक्ति शोषण, अन्याय और अनुचित कार्यों के विरूद्ध संघर्ष करता है।

अम्बेडकर ने कहा कि श्रेष्ठ जीवन के लिए स्वंतत्रता, समानता और बंधुता अनिवाय है और उनके लिए पृथक् अधिकारों की सत्ता की रचना किए जाने की जरूरत है। उन्होंने अधिकारों को उदार व्यक्तिवाद की केवल संकुचित सीमाओं में ही नहीं समझा बल्कि एक व्यक्ति और सामूहिक अधिकारों के तौर पर भी समझा। उन्होंने संविधान सभा की बहसों में दोनों प्रकार के अधिकारों का समर्थन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने नागरिक और राजनीतिक अधिकारों तथा सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों के लिए भी तर्क प्रस्तुत किया। उन्होंने इन अधिकारों को विरोध के रूप में नही देखा बल्कि एक–दूसरे को मजबूत करने के रूप में देखा। यदि अधिकारों के बीच कोई द्वंद्व है तो उन पर नागरिक और राजनीतिक मंचों के माध्यम से चर्चा की जानी चाहिए। उन्होंने अल्पसंख्यकों और सांस्कृतिक समूहों के अधिकारों का भी समर्थन किया। ताकि वे अपने–अपने विश्वासों और पहचान को बनाए रख सकें, साथ ही सार्वजनिक मामलों में अपना न्यायपूर्ण स्थान प्राप्त करने के लिए उपयुक्त परिस्थितियां प्रदान हो सकें। उन्होंने समानता के कारणों से न केवल सुविधावंचित समुदायों को विशेष व्यवहार बल्कि असमतावादी सामाजिक संरचनाओं के आधार पर और स्वस्थ और श्रेष्ठ समाज के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए इन्हें उपलब्ध कराने का समर्थन किया।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : धर्म

अम्बेडकर ने विश्व के प्रमुख धर्मों, विशेषकर हिन्दू धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म और बौद्ध धर्म का विस्तृत रूप से उल्लेख किया है। उन्होंने हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म पर बहुत कुछ लिखा। धार्मिक विकास का मुख्य मार्ग जिसका पता उन्होंने प्राचीन भारत के बारे में लगाया, वह यह था कि वैदिक समाज का पतन हो गया और यह आर्य समाज में बदल गया, बौद्ध धर्म का उदय और इसके द्वारा हुए, सामाजिक और नैतिक रूपांतरण एवं राजनीतिक अभिव्यक्ति को प्राप्त हुआ।

उन्होंने पाया कि हिन्दू धर्म ग्रंथ एकीकृत और संयुक्त सूझबूझ के अनुकूल नहीं हैं। वे विभिन्न मतों और प्रवृत्तियों में कठोर मतभेदों को प्रतिबंधित करते हैं। वैदिक साहित्य में भी मतभेद हैं; उपनिषद् चिंतन का प्रायः वैदिक चिंतन के साथ सामंजस्य नहीं है, स्मृति साहित्य का श्रुति साहित्य के साथ

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

विवाद है, देवता एक–दूसरे के विरूद्ध हैं और तंत्र का मतभेद स्मृति साहित्य के साथ है। हिन्दू धर्म के अवतार राम और कृष्ण को अनुकरणीय उदाहरण नहीं माना जा सकता। उन्होंने भगवद्गीता के बारे में कहा कि इसने बौद्ध धर्म के उदय के कारण ब्राह्मणवाद को बचाने के लिए प्रमुख रूप से तर्क प्रस्तुत किए और धार्मिक कर्मकांडों और धार्मिक रीति–रिवाजों के प्रति आग्रहों द्वारा यह स्वयं को बचाने में असफल रहा।

अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म की नई व्याख्या विकसित की और इसे सामाजिक रूप से संलिप्त देखा। इसने गरीबों और शोषितों को सुविधा दी और यह संसार के सुख–दुखों से जुड़ा हुआ है। यह ईश्वर के अस्तित्व अथवा आत्मा की अमरता को नही मानता। यह विवेक और तर्क को उचित मानता है तथा इस संसार के अस्तित्व का समर्थन करता है, नैतिक व्यवस्था को उचित ठहराता है तथा विज्ञान का समर्थन करता है। उन्होंनरे स्वतंत्रता, समानता और समुदाय को बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के लिए प्रमुख माना।

अम्बेडकर ने ईसाई धर्म और इस्लाम की धर्मवैज्ञानिक और समाज वैज्ञानिक आलोचना की। दोनों अनुभवातीत प्रभुत्व का समर्थन करते हैं, मानव विवेक का अपमान करने के अतिरिक्त निरंकुश और पितृसत्तात्मक प्रवृत्तियां पैदा करते हैं। वास्तव में ये मानव विवेक जांच–परख में फंस गए जिन्हें उन्होंने आरंभ में सजातीय विवाह के लिए अभिन्न माना। उन्होंने यह भी पाया कि जाति का नाम जाति की निरंतर पुनः उत्पत्ति के लिए जरूरी है। उन्होंने तर्क दिया कि अलग पहचान के रूप में जातियों को श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धान्त पर आधारित जाति व्यवस्था से अलग करना होगा। इस व्यवस्था के शिखर पर ब्राह्मण हैं। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि श्रेणीबद्ध असमानता के आधार पर वर्गीकरण व्यवस्था के स्थायित्व को बचाता है और उसकी निरंतर पुनः उत्पत्ति को सुनिश्चित करता है तबकि साधारण असमानता अनुमति नहीं देती। विरोधी सदस्यों को सम्मान और घृणा के सोपानक्रम में अन्य श्रेणी के रूप में समायोजित कर लिया जाता है जोकि जाति व्यवस्था की स्वतंत्रता और लोगों की समानता में बाधा पहुंचाते हैं। ईसाइयों का सह विश्वास कि ईसा मसीह ईश्वर का पुत्र है, विवेक का विरोध करता है। अम्बेडकर ने महसूस किया कि इन दोनों धर्मों ने श्रेणीबद्ध असमानता के लिए बहुत सीमा तक अपने आपको ढाल लिया है। इन दोनों धर्मों के नियमों ने इनके अनुयायियों को प्रायः बल और हिंसा अपनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बुद्ध को इन दोनों धर्मों के समर्थकों के विरूद्ध खड़ा पाया।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : जाति

जाति और जाति व्यवस्था के बारे में अम्बेडकर की जानकारी में समय–समय पर कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन होते रहे। आंरभ में, उन्होंने जाति की विशेषताओं को मिश्रित सांस्कृतिक वातावरण में विजातीयता पर थोपी गई सजातीयता माना। उन्होंने महसूस किय कि सती, बाल विवाह प्रथाएं और विधवा विवाह प्रतिषेध जैसी बुराइयां इसके अपरिहार्य परिणाम थे। एक बार किसी जाति की अपनी सीमाएं बंद हो गई हो अन्य जातियों ने भी उसका अनुसरण किया। ब्राह्मणों के समाजिक रूप से संकीर्ण होने से सर्वप्रथम जातियां उत्पन्न हुईं। अम्बेडकर जाति की सजातीय विशेषता पर बल देते रहे परन्तु अन्य विशेषताओं जैसे श्रम–विभाजन, साथ–साथ खाना–पीना और जन्म के सिद्धान्त की अनुपस्थिति जैसी अन्य विशेषताओं का अधिक उल्लेख नहीं किया। अम्बेडकर का मानना था कि जाति हिन्दू धर्म की अनिवार्य विशेषता है। कुछ सुधारकों ने इसे छोड़ दिया हो परन्तु जाति संहिता को तोड़ना बहुत बड़ी संख्या के लिए गहरे जकड़े विश्वासों का स्पष्ट उल्लंघन है। वर्ण–व्यवस्था और जाति व्यवस्था को नियंत्रित करने वाले सिद्धान्त एक ही प्रकार के हैं। दोनों श्रेणीबद्ध असमानता को स्वीकार करते हैं और बुद्धि के बजाए जन्म के सिद्धान्त का समर्थन करते हैं।

अम्बेडकर का तर्क था कि सामुदायिक बंधनों को संचालित किए बिना और स्वतंत्रता तथा समानता को प्रोत्साहित किए बगैर जाति का उन्मूलन प्रायः असंभव हो जाता है। डन्होंने इस उद्देश्य

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

के लिए अंतरजातीय विवाह और अंतरभोज का सुझाव दिया और माना कि अंतरभोज का कार्य इतना कमजोर है कि इससे स्थायी संबंध नहीं बन सकते। उनका यह भी तर्क था कि जो शास्त्र 'वर्णाश्रम धर्म' का समर्थन करते हैं उन्हें छोड़ देना चाहिए क्योंकि ये समाज के श्रेणीबद्ध संगठन व्यवस्था को उचित और वैध ठहराते हैं। उनका कहना था कि हिन्दू धर्म में पुरोहिती जन्म के बजाए प्रमाणित सक्षमता के आधार पर सभी सह–धर्मानुयायियों के लिए खोल दी जाए। साथ ही, उनका मानना था कि इसका पालन करना प्रायः असंभव है क्योंकि जिसे छोड़ना होता है, उसके लिए धार्मिक रूप से आदेश देना जरूरी होता है।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : छुआछूत

अम्बेडकर ने छुआछूत को जाति से अलग माना हालांकि छुआछूत पर भी जाति की तरह ही श्रेणीबद्ध असमानता के उसी सिद्धान्त की छाप है। छुआछूत न केवल जाति अपमान का चरम रूप है बल्कि गुणात्मक रूप से यह अलग रूप है क्योंकि इस व्यवस्था ने अछूतों को दायरे से बाहर रखा और सामाजिक अंतः संपर्क को दूषित और शोचनीय बनाया। उनका तर्क था कि मतभेदों और अंतरों के बावजूद सभी अछूत एक जैसी असुविधा झेल रहे हैं और सवर्ण हिन्दू उनके साथ ठीक व्यवहार नहीं करते। उन्हें गांव की सीमा के बाहर बस्तियों में रहने के लिए मजबूर किया जाता है और उनका सर्वत्र बहिस्कार किया जाता है तथा उन्हें संपर्क तथा मानव समाज से दूर रखा जाता है।

उन्होंने इस स्थिति को नहीं माना कि छुआछूत का आधार जाति (मूलवंश) में निहित है। उन्होंने इसे ब्राह्मणवाद की विचारधारा से समर्थित सामाजिक संस्था माना। एक उदाहरण में छुआछूत की उत्पत्ति के कारणों की व्यापक रूप से जांच की नहीं की बल्कि उन्होंने एक अत्यंत कल्पनात्मक शोधप्रबंध भी प्रस्तुत किया कि अछूत टूटे हुए लोग हैं जो ग्रामीण समुदायों की सीमा के बाहर रहते हैं और जिन्होंने बौद्ध धर्म और गोमांस व्यागने से मना कर दिया है तथा उन्हें अछूत बना दिया गया है।

भारत में व्याप्त गहरे विश्वासों और छुआछूत की प्रथाओं के बारे में अम्बेडकर का विचार था कि इस बीमारी के लिए कोई समाधान नहीं ढूंढा जा सकता। छुआछूत को दूर करने के लिए पूरे समाज का परिवर्तन करना जरूरी है। दूसरे व्यक्ति के लिए सम्मान और अधिकार केवल संवैधानिक तंत्र के बजाए जीवन पद्धति होना चाहिए। छुआछूत के इर्द–गिर्द निहित स्वार्थों और पूर्वग्रहों के कारण, स्थापित समूहों से ज्यादा कुछ आशा नहीं की जा सकती है। अतः उन्होंने महसूस किया कि स्वयं को मुक्त करने की प्राथमिक जिम्मेदारी स्वयं अछूतों की ही है। इस प्रकार की स्वंयहायता के लिए न केवल संघर्षों की जरूरत है बल्कि इसके लिए शिक्षा और संगठन की भी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न स्तरों पर प्राथमिकताओं के साथ संवैधानिक लोकतंत्र भी इस प्रयास में बहुत सहायता कर सकता है।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : संवैधानिक लोकतंत्र

अम्बेडकर के कार्य का मुख्य क्षेत्र संवैधानिक लोकतंत्र पर था। वे विभिन्न संविधानों के विशेषज्ञ थे, विशेषकर उन संविधानों के जिन्होंने आन्दोलन की व्यापक अवधारणा को प्रस्तुत किया था। लोगों को एकता के बंधन में बांधने के लिए और सामूहिक कार्यों में लोगों को समान सहभागिता प्रदान करने के लिए कानून विधि का शासन उनकी कल्पना के लिए अत्यंत अनिवार्य था। वह एक तरफ कानून और दूसरी तरफ रीति–रिवाजों तथा लोकप्रिय विश्वासों के बीच अंतः संबंध के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। परन्तु उन्होंने महसूस किया कि रीति–रिवाज संकीर्ण हितों का समर्थन कर सकते हैं और लोकप्रिय विश्वास पूर्वग्रहों में गहराई से जकड़े जा सकते हैं तथा हो सकता है कि न्याय न हो सके। वे समय की मांग, नैतिकता और विवेक के अनुरूप न हों। यदि कानून स्वतंत्रता और लोकतंत्र

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

पर कायम रहता है तो इसे सामान्य कल्याण के कार्य के लिए प्रयोग किया जा सकता है। सार्वजनिक संस्कृति में विस्तृत पूर्वग्रहों और न्याय की मनाही को ध्यान में रखते हुए उन्होंने सोचा कि कानून पर आधारित राज्य की भूमिका और लोकतांत्रिक जनादेश अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने कानून द्वारा सूचित और ऐसे कानून जिनकी पहचान लोकतंत्र के प्रति संवेदनशीलता से हो, इस पर विचार किया। कानून में विवेक और नैतिकता होनी चाहिए परन्तु कानून के आधिकारिक निषेधादेश के बिना लोकतंत्र का कोई महत्व नहीं है।

लोकतंत्र और कानून पर अम्बेडकर ने जो बल दिया, उसने राज्य की स्वायत्ता पर भी बहुत जोर दिया। राज्य को समाज में व्याप्त संकीर्ण हितों को छोड़ने की जरूरत है जो प्रायः राज्य को अपने उद्देश्य के लिए एक अस्त्र में परिवर्तन कर देते हैं, उन्हें भी संकीर्ण हित माना जा सकता है। वे अधिकारों को भी कमजोर कर सकते हैं परन्तु साथ ही उनका कहना था कि वे संवैधानिक लोकतंत्र को बनाए रखे हुए हैं।

डॉ0बी0आर0 अम्बेडकर : सामाजिक न्याय

अम्बेडकर भारत में पहले सिद्धान्तवादी थे जिन्होंने यह माना था कि यदि राज्य अधिकारों को कायम रखने के लिए प्रतिबद्ध है तो उसे चाहिए कि वह सुविधावंचितों के लिए राज्य के संवैधानिक आधार पर विचार करे। उन्होंने सुविधावंचित लोगों को निर्धारित करने के लिए एक जटिल मानदंड विकसित किया। छुआछूत एक बड़ी सामाजिक हानि है, हालांकि यह अत्यंत अपमानजनक और तिरस्कारपूर्ण है। उन्होंने सामाजिक रूप से जन्म से उत्पन्न प्रतिकूल अवस्थाओं पर प्रकाश डाला क्योंकि वे प्राकृतिक और वंशागत प्रतिकूल अवस्थाओं से अनभिज्ञ थे परन्तु अनुभव किया कि सर्वाधिक प्रतिकूल अवस्थाएं प्रभावशाली सामाजिक संबंधों से ही कायम हैं। ये सामाजिक संबंध स्वाभाविक प्रतिकूल दशाओं में बदलने का प्रयास करते हैं जो उनके ध्यान को रोकते हैं और समाज के बड़े भाग को उनके प्रति जिम्मेदारी से वंचित करते हैं। वे अपने पीछे सामान्य रूप से वंचित समूहों के लिए और विशेषरूप से अछूतों के लिए सुरक्षा उपाय की व्यवस्था छोड़ गए। उनका मानना था कि सकारात्मक उपाय ही समाज के केवल नैतिक अंतःकरण की अपेक्षा बेहतर गारंटी है हालांकि नैतिक अंतःकरण ऐसे उपायों को बरकरार रखने के लिए पहली शर्त है।

सुरक्षा उपायों की योजना के संबंध में उन्होंने तीन प्रकार के उपाय बताए हालांकि उन्होंने इन सभी तीन प्रकार के उपायों को सभी सुविधावंचित समूहों और ऐसी ही अन्य समूहों के लिए उपयुक्त नहीं माना। इन उपायों की उपयुक्तता पर कार्य संबंधित समूह की ठोस दशाओं के प्रत्युत्तर में किया जाना चाहिए। उन्होंने वंचित समूहों के लिए स्वायत्त राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग की ताकि उनकी न केवल राजनीतिक उपस्थिति सुनिश्चित हो सके बल्कि संबंधित समूह स्थिति के अनुसार स्वयं अपने विकास और परिरक्षण के कार्य सुनिश्चित कर सके। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए सार्वजनिक विवेक पर निर्भर रहने की अपेक्षा निश्चित संवैधानिक उपायों पर विचार किया। उनका मानना था कि इस प्रकार का प्रतिनिधित्व इन लोगों को बड़े और सामान्य मुद्दों का ध्यान। रखने में सक्षम बनाएगा और तदनुसार लोग अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं को बता सकेंगे। उन्होंने वंचित समूहों के लिए सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण की उस सीमा तक मांग की ताकि वे इस प्रकार के रोजगार के लिए शर्तें पूरी कर सकें। उनका कहना था कि यदि इस प्रकार का समर्थन कानूनी रूप से उन्हें प्राप्त होता है तो वे बिल्कुल अलग–थलग पड़ जाएंगे। उन्होंने इन समूहों के लिए विस्तृत सहायक नीति उपायों की मांग की ताकि राज्य द्वारा शुरू किए जाने वाले विभिन्न विकासात्मक और कल्याणकारी उपायों के लाभ उन तक पहुंच सकें।

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

अम्बेडकर ने बहुसंख्यकों की सदिच्छा और कल्याण की अपेक्षा अधिकारों की अवधारणा पर आश्रित होने वाले विशेष उपायों पर जोर दिया। वास्तव में स्वयं सदिच्छा को विकसित किया जाना चाहिए और ऐसे अधिकारों की जानकारी होनी चाहिए। इस प्रकार के विकास के अभाव में, सदिच्छा और कल्याण प्रायः संकुचित हितों में परिवर्तन हो जाते हैं जो परोपकार की भाषा में स्वयं छला महसूस करते हैं।

समाहार

डॉ0 अम्बेडकर का यह विचार सही है कि किसी भी उत्पीड़ित समूह को अपने भीतर से नेतृत्व पैदा करना चाहिए–किसी अन्य समूह की सहानुभूति या नेतृत्व के सहारे उसे अपने उत्थान की आशा नहीं करनी चाहिए। परंतु जब किसी अन्य समूह से संबंध रखने वाला समाज–सुधारक इस समूह के उत्थान की ओर अग्रसर हो तो उसे सदैव संदेह की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। उदाहरण के लिए, स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824–83), स्वामी विवेकानंद (1863–1902) और महात्मा गांधी (1869–1948) ने निम्न जातियों के उत्थान के लिए जो प्रयत्न किए, उन्हें निरर्थक मानकर परे नहीं रख सकते। देखना यह चाहिए कि क्या दूसरे समूह का नेता सच्चे मन से उनके लिए कुछ करना चाहता है, या वह केवल उनका राजनीतिक समर्थन जुटाकर शक्ति प्राप्त करने की जुगाड़ कर रहा है? जो सुधारक सच्चे मन से इनका साथ देने को तत्पर हो, उसे उपयुक्त सम्मान देना इनका कर्तव्य है। अम्बेडकर यह मानते थे कि मनुष्यों में केवल राजनीतिक समानता और कानून के समक्ष समानता स्थापित करके समानता के सिद्धांत को पूरी तरह सार्थक नहीं किया जा सकता। जब तक उनमें सामाजिक–आर्थिक समानता स्थापित नहीं की जाती, तब तक उनकी समानता अधूरी रहेगी। हमारे देश पर आज की दुनिया में भूमंडलीकरण की पूँजीवादी प्रक्रियाओं के चलते पुर्नउपनिवेशीकरण का खतरा मॅडरा रहा है तो दूसरी तरफ धर्म और संस्कृति के नाम पर सांप्रदायिक शक्तियां लगातार मजबूत हो रही हैं। अंधराष्टवाद के विरूद्व प्रगतिशील, धर्मनिरपेक्ष तथा जनतांत्रिक राष्ट्रवाद को अपनाना हमारे लिये जरूरी हो गया हैं, क्योंकि नवसाम्राज्यवादी और नवफासीवादी–शक्तियों की मार अततः उन्हीं लोगों पर पड़ती हैं, जो सामाजिक अन्याय व बहिष्करण के शिकार है। अम्बेडकर ने जिन अर्न्तविरोधों को दूर करने के लिए कहा था वे सामाजिक स्तर पर चाहे कुछ कम हुए हों, लेकिन भूमण्डलीकरण के वर्तमान दौर में आर्थिक स्तर पर पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गये है। भारतीय लोकतंत्र के विषय में डा0 अम्बेडकर के वे शब्द याद आते हैं जो उन्होंने भारत का संविधान प्रस्तुत करते हुए संसद में कहे थे, : ''जनवरी की 26 तारीख को हम अंतर्विरोधों के युग में प्रवेश करेंगे। राजनीति में समता और सामाजिक–आर्थिक जीवन में विषमता होगी। राजनीति में हम एक व्यक्ति की कीमत एक वोट के आधार पर आंकेगे लेकिन सामाजिक और आर्थिक जगत में विषमतामूलक संरचनाओं के कारण हम एक व्यक्ति–एक मूल्य के उसूल को नकारना जारी रखेंगे। अंतर्विरोधों की इस गिरफ्त में हम कब तक फंसे रहेंगे ? सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में हम समता को कब तक ठुकराते रहेंगे? अगर हमने लंबे अरसे तक समता को अस्वीकार करना जारी रखा तो इसका नतीजा हमारे राजनीतिक लोकतंत्र के संकटग्रस्त होने में ही निकलेगा।'' (कांस्टीटुएंट एसेंबली डिबेट खण्ड दस, ऑफीशियल रिर्पोट)। इस प्रकार डा0 अम्बेडकर सामाजिक एवं आर्थिक अन्याय से मुक्त समाज की स्थापना करना चाहते थे जिसका जरिया उनके अनुसार, सांस्कृतिक क्रांति ही थी। उन्होंने क्रांतिकारी परिवर्तनों की राह पर चल कर स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व के आदर्शो की प्राप्ति करनी चाही। उन्होने बहिष्कृत जनों को शिक्षित एवं संगठित हो कर आंदोलन की राह पर चलने का आह्वान किया। डा0 अम्बेडकर ने दलितों की मुक्ति का जो सपना देखा था वह बावजूद तमाम सारे सामाजिक, राजनैतिक, दलित आन्दोलन के अभी भी अधूरा है। आज उत्तर प्रदेश जैसे राज्य के दलित आन्दोलन, बी0एस0पी0 की कार्य प्रणाली उसके सर्वजन के प्रयोग आदि का तार्किक विश्लेषण करने की

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

आवश्यकता है और पहचान तथा जाति की राजनीति की संभावनाओं और सीमाओं को भी विश्लेषित करने की आवश्यकता है। दलितों के हाथ में सत्ता मुक्ति तथा सामाजिक परिवर्तन के लिये या तात्कालिक सत्ता सुख के लिये यह भी विश्लेषण करने की आवश्यकता होगी। अम्बेडकर को एक नेता के रूप में चित्रित किया गया है जिन्होंने अछूतों के हित के लिए कार्य किया। वे वास्तव में देशभक्त थे और उन्होंने भारतीय समाज के सर्वाधिक सुविधावंचित वर्ग और निम्न वर्ग का समर्थन किया। परन्तु इस प्रकार का संरक्षण और समर्थन एक विचारधारा पर आधारित था। वे आलोचनात्मक रूप से अपन समय के संसार में विचारों और विचाराधाराओं के साथ जुड़े थे और उनके संबंध में अपने मूल्यांकन तथा निर्णय तैयार किए। उन्होंने उनकी लोकप्रियता और श्रेष्ठता को बचाया। उन्होंने निजी क्षेत्र में और समाजों के नैतिक जीवन में धर्म को स्थान दिया परन्तु उनका विचार था कि यह स्थान अच्छे विवेक में निहित होना चाहिए। अधिकारों की मिश्रित अवधारणा और इस संसार का दावा सार्वजनिक जीवन की उनकी जानकारी के लिए महत्वपूर्ण था। वे लोकतंत्र के तीव्र समर्थक थे। परन्तु उनका कहना था कि लोकतंत्र को किसी शासन की व्यवस्था में नियंत्रित नहीं किया जा सकता है परन्तु इसे जीवन पद्धति बनने की आवश्यकता है। वे जाति व्यवस्था और छुआछूत के कट्टर आलोचक थे और उन्होंने इन्हें समाप्त करने का बहुत प्रयास किया। उन्होंने सामाजिक न्याय को अच्छी राज्यव्यवस्था की एक अनिवार्य विशेषता माना और उसके लिए ठोस उपाय सुझाए। उनके विचार उनके समकालीन चिंतकों से उन्हें अलग करते हैं और आज हम उनका सम्मान करते हैं तथा दूसरों से बहुत कुछ अलग होने के कारण वे हमारे लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची

1. ओमवेट, गेल 2009. दलित और प्रजातान्त्रिक कांति उपनिवेशीय भारत में डा0 अम्बेडकर एवं दलित आन्दोलनः प्रकाशक, सेज/रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
2. Michael, S.M. (ed.) 1999. Dalits in Modern India, Vision and Values. New Delhi: Vistar Publications.
3. सिंह, आर.जी. 1999, सामाजिक न्याय लोकतंत्र और जाति व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
4. सिंह, आर.जी, 1987, भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक समस्यायें, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,
5. रा.गो.सिंह, 1991,डॉ. भीमराव आम्बेडकर के सामाजिक विचार, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल,
6. आर.जी.सिंह, 1986, भारतीय दलितों की समस्यायें एवं समाधान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल,
7. ओमवेट गेल 2011 दलित दृष्टि – वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. भारती, कंवल, 2004, दलित विमर्श की भूमिका, इतिहासबोंध प्रकाशन,
9. रा.गो.सिंह, 1998, सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी
10. कुमार, विवेक, 2002, दलित समाज पुरानी समस्याएं नई आकांक्षाएं एक समाजशास्त्रीय अवलोकन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. कुमार, विवेक, 2007. बहुजन समाज पार्टी एवं संरचनात्मक परिवर्तन, एक समाजशास्त्रीय अवलोकन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली।
12. संस्कृति कल आज और कल, 2009, इतिहासबोंध प्रकाशन,
13. कीर, धनन्जय, 1981, डॉ. आम्बेडकर लाइफ एण्ड मिशन्स, मुम्बई, पापुलर प्रकाशन,
14. ज्याँ द्रेज, 2010, अम्बेडकर और भारतीय लोकतंत्र का भविष्य, इतिहासबोंध प्रकाशन,

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341
Impact Factor – 1.115

15. डी.आर. जारव' 2004, डा0 अम्बेडकर एक प्रखर विद्रोही एबीडी पब्लिकर्स जयपुर
16. दुबे, अभय कुमार 2007. आधुनिकता के आईने में दलितः प्रकाशक C.S.D.S./ वाणी प्रकाशन नई दिल्ली
17. अपेक्षा त्रैमासिक, सम्पादकः तेज सिंह, नई दिल्ली
18. सामयिक वार्ता, दिल्ली
19. फिलहाल, पटना
20. Some useful Websites
21. http://www.marxists.org/
22. http://srdarapuri.blogspot.in/
23. http://dalitmukti.blogspot.in/2013/01/posted-by-reyaz-ul-haque-o 1232013.html?spref=bl
24. http://hashiya.blogspot.in/2013/12/blog-post_12.html